Sanskrit Hons B.A Part II
Paper - 3

प्रथम अध्याय

नाटक - अभिज्ञानशाकुन्तलम्

कालिदास का स्थिति-काल :

किसी भी काव्य की महनीयता कवि की महत्ता पर र्व्याति होती है। अतः कवि जैसा महान् होगा उसकी कविता भी उतनी ही महती होगी।

संस्कृत - साहित्याकाश में ~~[illegible]~~ 'नाट्यत्रयी' नाम से अभिहित नाट्य काव्यों में अभिज्ञानशाकुन्तलम्, मालविकाग्निमित्रम् और विक्रमोर्वशीयम् एक ऐसा अनुठा नाट्य काव्य है, जो सूर्य की तरह देदिप्यमान और चन्द्र की आह्लादकता से भरे हुए हैं। यदि हम ~~[illegible]~~ 'रघुवंश' में अमर कवि कुल- गुरु- कालिदास की प्रकाण्ड प्रतिभा का इन चर्म-चक्षुओं से अवलोकन करते हुए तृप्त नहीं होते हैं तो कुमारसम्भव की चन्द्रिका के चमक से ~~[illegible]~~ निर्झरित पियुष-धारा के आह्लादमय आस्वाद से अघाते नहीं हैं। महाकवि ने इन दोनों काव्यों में जिस राजवंश एवं देववंश परम्परा का भव्य प्रसाद निर्मित किया है, वह सृष्टि-पर्यन्त अपनी गरिमा को चमत्कृत करता रहेगा, क्योंकि शब्द स्वतः नित्य है और जब साहित्य-साधक उसे अपने व्यक्तित्व की कसौटी पर परीक्षित कर सहृदय पाठकों के बीच उपस्थित करता है, तब वह उन्हें असीम तृप्ति प्रदान कर ~~[illegible]~~ चित्त को प्रसन्न कर देता है। ऐसे ही साहित्य-साधक की तरह महाकवि कालिदास ने रघुवंशी राजाओं के ~~[illegible]~~ चरित एवं देवाधिदेव महातपस्वी शिव की उद्दाम अनन्त शक्ति का जैसा शाश्वत वर्णन अपने ही इन ~~की~~ दोनों महाकाव्यों में किया है वैसा अन्यत्र कहीं भी देखने को नहीं मिलता। अतः हम कह सकते हैं कि गिरवाणगिरा सुरभारती की स्नेहमयी गोद में कवि और काव्य का ~~[illegible]~~ मणिकांचन संयोग यदि प्राप्त हुआ है, तो वह ~~है~~ महाकवि कालिदास और उनके महाकाव्य रघुवंश और कुमारसम्भव।

ऐसे महनीय कवि का जीवन-वृत्त महाकाल के ~~[illegible]~~ गर्भ-गुहा में इस तरह अन्तर्ध्यान हो गया है कि उनके उत्तरकालीन समालोचक ही नहीं अपितु साहित्य के महान् साधक भी यह पता न कर सके कि आखिर इन महान् कृतियों के महान् उद्गाता का जन्म कहाँ हुआ है? उन्होंने ~~[illegible]~~ विद्वता कहाँ पाई? जीवन कहाँ बिताया? ये सब रचनाएँ कहाँ की है?

उनके काव्यों के मन्थन से उनके जीवन-वृत्त के विषय में जो भी तथ्य विद्वानों ने निकाला है, वह स्थायी नहीं होते हुए भी अपना कम महत्व नहीं रखता। राजशेखर (10वीं शताब्दी) ने अपने सूक्ति मुक्तावली में तीन कालिदास का उल्लेख किया है —

" एकोऽपि जीयते हन्त कालिदासो न केनचित् ।
शृंगारे ललितोद्गारे कालिदास त्रयी किमु ।(89)(8.6) 1

कुछ लोग इन्हें विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक मानते हैं। जैसा कि ज्योतिर्विदाभरण में लिखा गया है —

धन्वन्तरिक्षपणकामर सिंह शंकु
वेताल भट्टघटखर्पर कालिदासः ।
ख्यातोवराहमिहिरो नृपते: सभायाँ
रत्नानि वैवररुचिर्नव विक्रमस्य "

विक्रमोर्वशीयम् की प्रस्तावना में अभिलिखित निम्न कथन से पता चलता है कि महाकवि कालिदास विक्रमादित्य के सभा-पण्डित थे —

" सोऽहमव विक्रमोर्वशीयम् नाटकमपूर्वं प्रयोक्ष्ये । 8न्व
चिरस्या महेन्द्रोपकर पर्याप्तेन विक्रममहिम्ना वर्धते। (विक्र-प्रस्ताव)
अनुत्सेक: खलु विक्रमालंकार: ।। विक्र- प्रस्तावना)

किन्तु ये किस विक्रमादित्य के सभा-पण्डित थे, यह स्पष्ट कहीं लिखा नहीं है। प्रथम शताब्दी से लेकर षष्ठ शताब्दी तक विक्रमादित्य उपाधि-धारी विभिन्न नरपतियों का नाम आता है। (बाणभट्ट (606-647ई०) ने हर्षचरित में कालिदास की मधुर कविताओं की प्रशंसा की है —

निर्गतासुनवाकस्य कालिदासस्य सूक्तिषु ।
प्रीतिर्मधुर सान्द्रासु मंजरीष्विव जायते ।।

उपर्युक्त प्रमाणों से कालिदास के काल की उपरितम सीमा निर्धारित होती है। किन्तु कालिदास ईसा पूर्व 125 वर्ष से लेकर सप्तम शताब्दी के मध्य तक कब हुए, यह जानने के लिए विक्रमादित्य उपाधि-धारी विभिन्न नरपतियों का काल एवं उनके साम्राज्य विशेष, ~~रीति-रिवाजों~~ रीति-रीवाजों, देश-काल, वातावरण तथा रीति-रीवाजों के साहचर्य से ही जाना जा सकता है।

ऐतिहासिक अभिलेखों एवं विभिन्न विद्वानों के ग्रन्थों से यह पता चलता है कि ईसा पूर्व प्रथम शती से लेकर ईसा के षष्ठ शताब्दी तक छः विक्रमादित्य हुए हैं।

Scanned with CamScanner

DATE: PAGE:

1- मालव नरेश (ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी) जिसने शकों को परास्त कर विक्रमादित्य की उपाधि धारण की थी।

2- गुप्तकाल का समुद्रगुप्त, जिसने मालवों को हराकर विक्रमादित्य की विरुदावली से अपने को विभूषित किया था (88)। (340-345 ई०)

3. गुप्तकालीन चन्द्रगुप्त द्वितीय, जिसने वाकाटकों के साथ संधि कर एवं शकों का मूलोच्छेद कर विक्रमादित्य की उपाधि से अपने को अलंकृत किया था। (375-418 ई०)

4) स्कन्दगुप्त ने भी विक्रमादित्य की पदवी धारण की थी, (455 ई०) तक

5. उज्जयिनी के राजा गर्दभिल्ल के पुत्र ने भी विक्रमादित्य की उपाधि धारण की थी। (570 ई०) इसकी पुष्टि प्रबन्ध कोष और शत्रुंजय ग्रन्थ से होती है।

6 मालव नरेश यशोधर्मन (530 ई० से 580 ई० तक) ने भी विक्रमादित्य का पद धारण किया था (89) (1)

ईसा के पूर्व प्रथम शती में कालिदास को मानना युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होता, क्योंकि उस काल में भारत राष्ट्र शकों के अत्याचार से अशान्त था (90) उस काल में विक्रमादित्य नामक कोई प्रतापी राजा हुआ ही नहीं (91) समुद्रगुप्त के समकाल में भी कालिदास को माना नहीं जा सकता, क्योंकि ये शकों को पूर्ण रूप से परास्त नहीं कर पाये थे (92) स्कन्दगुप्त के भी समय में कालिदास को मानना न्यायसंगत नहीं लगता, क्योंकि स्कन्दगुप्त के द्वारा उन हूणों को परास्त करने की बात इतिहास से प्रमाणित नहीं होता, जिसे रघु के सद्वारा हराये जाने की बात रघुवंश में वर्णित है। (93) गर्दभिल्ल पुत्र विक्रमादित्य की बात भी प्रामाणिक नहीं है (94) छठी शताब्दी के विक्रमादित्य उपाधि-धारी यशोधर्मण के शकारि होने की चर्चा तो कहीं है ही नहीं। अतः उनके समय में भी कालिदास को मानना उचित नहीं है (95)

: वी० वी० मिराशी, भगवत शरण उपाध्याय एवं

आधार पर कालिदास को जहाँ मैथिल मानते हैं, वहीं बंगाली समीक्षक उनका स्थान बंगाल में स्थित मुर्शिदाबाद के 'गड़ा सिंगरू' नामक गाँव में मानते हैं। (100) डॉ पिटर्सन और स्वर्गीय चन्द्रबली पाण्डेय आदि ने इनका स्थान 'विदर्भ देश' माना है, क्योंकि विदर्भ देश की चर्चा उनके ग्रन्थों में (101) विशद रूप में हुई है। (102) किन्तु डॉ० रमाशंकर त्रिपाठी ने उपर्युक्त स्थान विषयक धारणाओं को निराधार ठहराकर कालिदास का स्थान काश्मीर के भू-भाग को ही माना है (103) दिल्ली विश्वविद्यालय के भूतपूर्व विभागाध्यक्ष श्री लक्ष्मीधर कल्ला ने भी महाकवि कालिदास का निवास स्थान काश्मीर ही माना है। (104) महाकवि ने जिस अलकापुरी की समृद्धि का बखान मेघदूत में किया है वह भाग काश्मीर से ही जुड़ा हुआ है। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी कालिदास को काश्मीरी ही बताया है, क्योंकि उनके मेघदूत में कश्मीर के जिन भू-भागों, नदियों, उपत्यकाओं, स्थली आदि का वर्णन हुआ है, उससे उनके काश्मीरी होने का संकेत मिलता है, (105) भगवत शरण उपाध्याय भी इन्हें कश्मीरी ही मानते हैं। (106)

सचमुच में महाकवि ने कश्मीर, हिमालय, कैलास, अलकापुरी एवं वहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य का जैसा सुरम्य वर्णन किया है, उसके अनुसार वे काश्मीरी ही हैं। युवावस्था में या जीविका के लिए या पाण्डित्य प्रदर्शन के स्थल से वे उज्जैन आये होंगे, क्योंकि, उस काल में विद्वान अपनी विद्वता की परीक्षा के लिए वहाँ जाते होंगे। शास्त्रार्थ में अजेय होने पर वे राजदरबार में ही रह जाते होंगे। महाकवि कालिदास के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ होगा, जिससे वे अपने प्रकाण्ड वैदुष्य एवं साहित्य प्रियता के वजह से उज्जैन नरेश के प्रिय पात्र हो गये होंगे।

महाकवि अपने काव्य में उज्जैयिनी के प्रति विशेष ~~आदरवान~~ आदरवान ~~दिखलाई~~ दिखलाई पड़ते हैं। तीनों नाटकों की प्रस्तावना से ऐसा अनुमान किया जाता है कि इन नाटकों का प्रथम अभिनय विक्रमादित्य के दरबार में ~~विद्वत परिषद्~~ विद्वद् परिषद् के समक्ष हुआ होगा (10 7) मेघदूत में तो उन्होंने उज्जैयिनी का वर्णन प्रायः विभिन्न स्थानों की अपेक्षा अधिक और विस्तृत रूप से 15 श्लोकों में किया है। महाकवि, इस उज्जैयिनी के रसरंग सौन्दर्य में इतना तल्लीन दिखते हैं कि उनके लिए ~~ब~~ वह पृथ्वी पर उतरा हुआ स्वर्ग हो।

अतः इन वर्णनों से यह स्पष्ट है कि कवि का उद्दाम यौवन ~~अ~~ उज्जैयिनी के वैभव-विलास के अन्तर्गत पला है। तभी तो वह उज्जैयिनी की मादकता का वर्णन करते हुए नहीं अघाता। ऐसे तो वे विक्रमादित्य के राज-सभा के शिरोमणि हैं ही।

महाकवि कालिदास का व्यक्तित्व :-

संस्कृत साहित्याकाश में महाकवि कालिदास मार्तण्डवत् अपना प्रभाव चारों ओर प्रक्षेपित करके दिखाई दे रहे हैं। परवर्ती काव्यकारों में ऐसे कौन कवि हैं जो महाकवि के प्रभाव से प्रभावित नहीं हैं? मेरी दृष्टि ऐसे एक भी नहीं हैं, जिन्होंने महाकवि की दूरदर्शिता के समक्ष अपनी अस्वाभाविक अनन्त दूरदृष्टि का परिचय अपने काव्यों में दिया हो।

महाकवि की आत्मगोपनीयता के सम्बन्ध में डॉ॰ प्रभुदयाल अग्निहोत्री का विचार है कि यह महाकवि की महत्ता का एक निदर्शन है। जिस प्रकार जगत का ~~स्रष्टा~~ स्रष्टा अपनी कृति में स्वयं को विलय कर उससे अभिन्न है, सर्वत्र रहता हुआ भी किसी एक स्थान पर नहीं है और न अपनी कृति के फल का भोग करता है, उसी प्रकार महान कलाकार स्वयं को प्रच्छन्न रखकर अपनी कृति में मूर्त स्वरूप ग्रहण करता है। शब्द-शब्द में

~~प्रतिबिम्ब प्रतिबिम्ब प्रतिबिम्ब प्रतिबिम्ब~~

DATE: PAGE:

प्रतिबिम्बित होकर भी वह किसी एक स्थान पर बद्ध नहीं होता। उसकी सम्पूर्ण साधना आराध्य को समर्पित रहती है। स्वार्थलेष से विरहित ऐसे कलाकार यदा-कदा ही उत्पन्न होते हैं और कालिदास उनमें से एक हैं। अनेक समीक्षकों ने उनके कृतियों में समकालीन संकेत पढ़ने की चेष्टा की है, सम्राटों की प्रशस्तियाँ ढूंढने का प्रयास किया है किन्तु कवि ने उन सब को झुठला दिया है। विनतमस्तक हुए हैं तो केवल पार्वती परमेश्वर के सम्मुख। (१०८)

कवित्व क्षेत्र में संस्कृत-साहित्य जगत में इनका कोई भी कवि तादात्म्यावस्था में दृष्टि गोचर नहीं होता। क्योंकि कविता की कसौटी छन्द, शब्द और भावप्रदर्शन को प्रमुख रूप से माना जाता रहा है। सुन्दर अलंकारों का प्रयोग भी कवित्व गुण की अलग विशेषता है। महाकवि की कविता में उनसभी गुणों की सन्निहितता प्रत्यक्ष दिखाई पड़ती है। संस्कृत साहित्य में जितने छन्द हैं, अनुष्टुप से लेकर मन्दाक्रान्ता, शार्दूल विक्रीडित, स्रग्धरा, आदि बृहत् छन्दों तक सभी छन्दों में इनका कविता मुखरित हुई है। वर्ण्य विषय देश, काल एवं वातावरण के अनुसार छन्दों का सुदृढ़ एवं सफल प्रयोग महाकवि ने अपने महाकाव्यों में किया है। उन्होंने अपनी कविता में छन्द, रस, और वर्ण्य वस्तु के आधार पर ही रसानुरूप शब्दों का प्रयोग सुन्दर ढंग से किया है। उत्तम आभूषण या महल का निर्माण करने वाला कलाकार अपने आभूषण एवं महल में रमणीयता एवं दृढ़ता लाने के लिए सुन्दर एवं मजबूत मणियों एवं पत्थरों का प्रयोग यत्रतत्र कर करता है जिससे निःसृत विभिन्न प्रकाश दर्शक के चित्त चंचुरिक को मोहित करते रहता है। उसी प्रकार महाकवि ने अपने काव्य रूपी महल के निर्माण में सुन्दर शब्द रूपी मुक्ता, पद्मराग, वैदूर्य, हीरे, जवाहरात आदि मणियों का यथास्थान प्रयोग कर अपनी काव्य-कलात्मकता का अनुपम परिचय दिया है।

भाषा और भाव की दृष्टि से भी इनकी कविता सर्वोत्तम है। ऐसा लगता है कि संस्कृत भाषा पर महाकवि का पूर्णतः

Scanned with CamScanner

DATE: PAGE:

प्राचीन नाटककार जहाँ वर्णन को प्रधानता देते थे वहीं कालिदास ने चरित्र-चित्रण को प्रमुखता प्रदान की है। मालविकाग्नि-मित्रम् की कौशिकी परिव्राजिका इस तथ्य को इस प्रकार व्यक्त करती हुई कहती है – नाटक में प्रयोग (अभिनय) की प्रमुखता होती है। (प्रथम अंक पृ० 64 मालविकाग्निमित्रम्) अपने इस सिद्धान्त की पुष्टि के लिए कालिदास विद्वानों की सहमति को भी ठुकरा देते हैं (मोहनदेव पंत अंक 2, पृ. 12) वे लोक रुचि के विरुद्ध भी अपनी कला की रक्षा करते हैं नाट्याचार्य गणदास के शब्दों में उन्होंने इस विचार की पुष्टि हेतु कहलाया है कि निन्दा के भय से जो नाटककार जनमत के सामने झुक जाते हैं वे बनिये हैं क्योंकि उनका उद्देश्य कला की अभिव्यक्ति न होकर जीविकोपार्जन है। (मालवि. अंक 1) उन्होंने इसी उद्देश्य से "मालविकाग्निमित्रम्" के कथानक को अभिनव ढंग से चित्रित किया है। उसके कथानक के सम्पूर्ण वातावरण तथा उसके विकास में मौलिकता की झलक मिलती है नृत्यगीत, चित्र, शिल्प एवं विदूषक की कार्यकुशलता से नाटकीय वस्तु आकर्षक एवं चमत्कारपूर्ण हो जाती है। मालविकाग्निमित्रम् की तरह कथानक विन्यास में चुस्ती एवं तारतम्य विक्रमोर्वशीयं में उपलब्ध नहीं है। फिर भी इसके चरित्रांकन तथा अभिव्यंजना में कोई कमी नहीं मालूम पड़ती है इसके चतुर्थ अंक में वर्णित पुरूरवा के प्रलाप में कोई नाटकीय ~~आधार~~ व्यापार अथवा गत्वरता नहीं है अनियंत्रित प्रेम के गम्भीर ~~उद~~ उद्वेग में यह गीत्यात्मक हो गया है। नाटककारों ने इसमें निहित प्रेम की मनोवैज्ञानिक परिणति ~~[illegible]~~ पुत्रजन्म के चित्रण में दिखाई है। महाभारत की निर्लज्ज, चालक, साधारण युवती अभिज्ञान-शाकुन्तलम् में लज्जावती, आज्ञाकारिणी, स्नेहमयी, आदर्श ~~ग्रहीणी~~ गृहिणी के रूप में चित्रित हुई है। इसी तरह महाभारत का कामुक स्वार्थी प्रणयी दुष्यन्त के चरित्र को धर्मपरायणता, सहृदय तथा कर्तव्यनिष्ठ आदर्श राजा के रूप में चित्रित करने के उद्देश्य से कालिदास ने महाभारत की सीधी सादी बेढ़ंगी नीरस कथा को भी नाटकीय कथानक

के रूप में ढालने के लिए अनेक परिवर्तन एवं परिवर्धन किये हैं। नाटकीयता के लिए कई नवीन घटनाओं की उन्होंने सृष्टि की है। इस नाटक के प्रणय के गम्भीर्य में संयम है। साथ ही नाटकीय व्यापार एवं अभिव्यंजना में प्रांजलता है। चरित्र एवं व्यापार के चयन में कालिदास की काव्यात्मक प्रवृत्ति दृष्टिगत होती है। उनके तीनों रूपकों का ~~विषय~~ प्रमुख विषय प्रेम सौन्दर्य है। प्रेम के विविध रूप इनमें मिलते हैं। इनमें दरबारी प्रपंच पूर्ण वातावरण में चिन्तामुक्त प्रेम, विच्छिन्न बना देने वाला अनियंत्रित प्रेम तथा यौवन-प्रेरित विवेकशून्य ऐसा प्रेम जो धीरे-धीरे दुःख दैन्य एवं संताप की ज्वाला में दग्ध होकर पवित्र एवं उत्कृष्ट हो गया है। प्रेम ही मानवजीवन की असाम संचालिका शक्ति है, उसे स्वीकार कर कवि ने उसे नियंत्रित रखा है तथा दैवी शक्तियों से अभिभूत चित्रित किया है।

महाकवि कालिदास मानवीय संवेगों के भी महान् ~~कि~~ चित्रकार हैं उन्होंने अपने काव्यों में बाल-सुलभ क्रीड़ा, कैशोर्यगत उत्साह, कैशोर्य और युवावस्था की संगम वेला का औत्सुक्य, युवावस्था की उन्मत्तता, प्रौढ़ावस्था का उत्तरदायित्व, बुढ़ापा का पुत्रवात्सल्य, विवेक और विराग को बड़ी स्वाभाविकता से चित्रित किए हैं। उन्होंने दाम्पत्य प्रेम में परस्पर समर्पण, सन्तान की अभावगत पीड़ा, संयोग एवं वियोग की ~~उत्कट~~ उत्कट अनुभूति, नर-नारी के स्वाभाविक स्नेहों को ऐसी यथार्थता की भूमि पर अपनी लेखनी ~~से~~ इतनी मादकता से चित्रित किया है कि प्रकृति एवं पात्रों के हाव-भाव बिल्कुल सही रूप में ~~आ~~ सामने प्रगट होते से दिखाई पड़ते हैं

योगशास्त्र का भी उन्हें सम्यक ज्ञान था। उन्हें विश्वास था कि माया का आवरण मिट जाने तथा पूर्वजन्म के ~~संचित क~~ संचित कर्मों के समाप्त हो जाने पर आत्मा का संयोग परमात्मा से होता है। इसलिए उन्होंने रघुवंश में कहा है —

"तमसः परमापद व्ययं पुरुषं योगसमाधिना रघुः।"

उन्हें पूर्वजन्म के कर्मों पर विश्वास था। उनके मतानुसार पूर्वजन्म के संस्कार ही अगले जन्म में फलित होते हैं —

"भावस्थिराणि जननान्तर सौहृदानि"

उन्हें ज्योतिष का भी पूर्ण ज्ञान था। कालिदास के समय

उज्जयिनी विभिन्न शास्त्रों का केन्द्र था। शास्त्रीय व्यवस्था से ही जीवन का दैनिक कार्य होता था। महाकवि कालिदास जैसे महान विद्वान इससे वंचित कैसे रहते। उनके ज्योतिष विषयक ज्ञान के प्रमाण उनके काव्यों में यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं।
(1) दृष्टि प्रयातं परिहृत्य तस्य कामः पुरः शुक्रमिवप्रयाणे।
(2) तिथौ च जामित्रगुणान्वितायाम्।
(3) यद्यपि कालिदास साहित्य के पण्डित थे। कविता भी उनकी उत्कृष्ट कला थी, फिर भी अन्य विषयों की तरह उनका प्रवेश आयुर्वेद में भी था। उनके काव्यों में जहाँ तहाँ इसका प्रभाव मिलता है। कुमारसंभव के द्वितीय सर्ग मे तारकासुर के वीरात्म्य एवं पराक्रम के वर्णन के प्रसंग में मिलता है।
"तस्मिन्नुपाया: सर्वेन: क्रूरे प्रतिहतक्रिया:
वीर्यवन्त्यौषधानीव विकारे सान्निपातिके ॥ 2/48 कुमारसम्भव.

पदार्थ विज्ञान में भी उनकी पहुँच थी। वे यह जानते थे कि ग्रहण कैसे होता है और समुद्र में पूर्णिमा के दिन ज्वारभाटा क्यों उठता है?
"इयस्तु किंचिदत्र विलुप्तधैर्यश्चन्द्रोदयारम्भ इवाम्बुराशि: ॥

उन्हें जलवर्षण प्रक्रिया का भी ज्ञान था। वे जानते थे कि सूर्य के प्रचण्ड उत्ताप से जल उष्णभाप बनकर ऊपर जाता है और वहाँ शीतलता प्राप्त कर वर्षा पड़ता है। कुमारसंभवम के चौथे सर्ग में ऐसा वर्णन आया है—"रविपीतजला तपात्यमे पुनरोघेन हि युज्यते नदी।"
महाकवि कालिदास राजनीति के भी प्रकाण्ड पण्डित थे। अनेक ग्रन्थों में प्राय: राजतन्त्रात्मक शासन प्रणाली का ही वर्णन मिलता है, जिससे उनके राजनीति विषयक ज्ञान की झलक मिलती है। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि राजा किसे कहते हैं, उसका कर्तव्य क्या है, उसे प्रजा के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए, दुश्मनों के साथ कैसी कठोरता से पेश आना चाहिए। इन सब बातों की बड़ी सूक्ष्मता से इन्होंने वर्णन किया है।
भौगोलिक स्थिति की इतनी सूक्ष्म जानकारी उन्हें थी कि उनके रघुवंश, मेघदूत, और शाकुन्तल में भारत के भू-प्रदेशों का यथावत वर्णन मिलता है। कश्मीर से कन्याकुमारी और कामरूप से फारस तक के प्राकृतिक भूगोल का वर्णन इनके काव्यों में जितनी सूक्ष्मता से हुई है, उतनी अन्य काव्यों में दुर्लभ सा

Scanned with CamScanner

सा जान पड़ता है। उन्होंने दिखाया है कि इस भारत-भूधरा पर हमेशा हिन्दू साम्राज्य कायम रहा है। इससे उनकी राष्ट्र-प्रियता ही नहीं; बल्कि भारत कालिदास के रूप में और कालिदास भारत के रूप में प्रतिभासित होते रहे हैं।

महाकवि ने भारतीय प्रशासन व्यवस्था में राजनीति पर धर्म के, क्षत्रिय पर ब्राह्मण के, राज सासंद पर विद्यापीठ के, बल पर बुद्धि के और शक्ति पर संयम की प्रभुता की आवश्यकता पर जोर दिया है, जो सफल प्रशासन के लिए आवश्यक है।

उनके काव्यों में मनु प्रतिपादित मानव संविधान की ही अनुशंसा की गयी है। महाकवि इस संविधान से रंच मात्र भी अलग दिखलाई नहीं पड़ते हैं। पुंसवन से अन्त्येष्टि तक सारे हिन्दू संस्कारों को उन्होंने हृदय से स्वीकार किया है। वर्णाश्रम व्यवस्था के वे पूर्ण समर्थक थे, ऐसा उनके काव्य से ज्ञात होता है। मानव सर्वप्रथम ब्रह्मचर्याश्रम, तत्पश्चात् गृहस्थाश्रम, बाद में वाणप्रस्थ और संयास में जाता है यही परम्परा कालिदास ने भी निभाई है। रघुवंश में दिलीप से अग्निवर्ण तक, अभिज्ञानशाकुन्तलम् में शकुन्तला आदि सभी पात्र वर्णाश्रम धर्म के नियमों से रंच मात्र भी टलते नजर नहीं आते हैं। शकुन्तला यद्यपि गार्हस्थ्य में आकर भी परित्यक्ता हुई, उसके लिए महाकवि ने तीसरे आश्रम में ही व्यवस्था की है जहाँ वह नव शिशु को प्रसव करती है। उन्होंने यह भी बताया कि क्षत्रियों का कर्तव्य पीड़ितों और शोषितों की रक्षा करना है। ब्राह्मणों का कर्तव्य अपरिग्रह और स्वाध्याय है। वैश्यों का काम लोकहित के लिए उत्पादन करना तथा शूद्रों का सेवा कर्म है। यही उनके धर्म है।

महाकवि के काव्यों एवं भाषा तथा शैलीगत सौन्दर्य की प्रशंसा करते हुए डा- प्रभु दयाल अग्निहोत्री ने लिखा है — उसकी भाषा अत्यन्त सीधी, सरस और सुलझी हुई है—। कालिदास की शब्दावली को समझने के लिए कोश-ग्रन्थ उठाने और उनके अप्रस्तुतों का रस लेने के लिए अलंकारशास्त्र की पोथियाँ पलटने की आवश्यकता नहीं होती। वे उपमाओं के प्रयोग करने में अद्वितीय हैं। उनकी उपमाएँ रात-दिन के परिचित पाठक के दाएँ-बाएँ घूमने वाली और इष्ट प्रभाव की जनक हैं। उपमाओं की ऐसी सादगी और प्रस्तुत से पूर्ण सामंजस्य ने उनके काव्य की गरिमा को बहुगुणित कर दिया है। कालिदास का छन्दोचयन मनोवैज्ञानिक है और स्वस्थ हास्य, जिसका संस्कृत में अत्यन्त दारिद्रय है यह कालिदास की रचनाओं में ही पूरी तरह निखरा है। (111)